ISSN : 3048-6203 Volume -2| Issue -1| Jan - Jun, 2025

शोध भूमि
शिक्षा एवं शिक्षण शास्त्र विषय की पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका
Page No. : 504-507

सूर्यबाला के उपन्यास 'दीक्षांत' में मूल्यों का ह्रास

पुष्पा कुमारी
शोधार्थी
विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग
तिलका मॉझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार
ईमेल– kumaripushpa8946@gmail.com

सारांश

आज शिक्षण संस्थानों को व्यवसाय का केन्द्र बनाकर रख दिया गया है। भ्रष्टाचार, राजनीतिक कुटनीति तथा स्वार्थ–परक के शिकार होने से शिक्षण संस्थान भी अछुता नहीं रहा है इस भ्रष्टाचार तथा कुटनीतिक भरी संस्थानों में अगर कोई एक अकेला ईमानदार, सच्ची निष्ठा, कर्तव्य परायण व्यक्ति आ गये तो उसका क्या मूल्य रह जाएगा? इसी मूल्यहीनता को सूर्यबाला जी ने अपने 'दीक्षांत' में दृष्टि गोचर किया है तथा नायक विद्या भूषण शर्मा के माध्यम से तत्कालीन समय मे शिक्षण संस्थानों में जो शिक्षकों के साथ घटित हो रही है बच्चें अपने ईश्वर रूपी शिक्षकों को अपमानित कर रहे हैं कक्षा में मजाक उड़ाया जा रहा है तथा ऐसे–ऐसे काण्ड के साथ–साथ विद्यालय तथा विश्वविद्यालय परिसर में राजनीति दबाब भी बना रहता है। डॉ० सूर्यबाला ने उपन्यास में राजनीति, शासन, प्रबंधन तथा शिक्षकों व बच्चों के गिरते मानव मूल्यों को दिखाया है तथा खुलकर विरोध किया है इसके साथ–साथ डॉ. सूर्यवाला ने मध्यवर्गीय, निम्नवर्गीय भेद के दौरान यातना और संघर्ष को दिखाया है जो आज हमारे समाज को खोखला करते जा रहे हैं।

बीज शब्द– विश्वास, अफवाह, भयानक झूठ–फरेब, ईमानदारी, शिक्षण संस्थान, मूल्य हीनता, संघर्ष, यातना, गुरू–दक्षिणा, वेदना, आवेश।

प्रस्तावना

साहित्य में घटित हो रहे चारों ओर की घटनाओं के साथ तत्कालीन परिवेश से भविष्य पर पड़नेवाले प्रभाव को (किसी भी क्षेत्र में हो) दिखाया गया है। हम जिस शिक्षण संस्थान को ज्ञान का मंदिर और शिक्षकों को ईश्वर मानते थे, वही आज इसके विपरीत व्यवसायीकरण का धंधा चला रहे है। साहित्य की पैनी दृष्टि से कोई भी संस्था, संस्थान अछूता नही रह सका है। साहित्य समाज के सभी वर्ग, क्षेत्र के सही–गलत को रूबरू कराता है 'दीक्षांत, उपन्यास के अंतर्गत शिक्षा की ऐसी वर्तमान स्थिति दिखाई गई है जो हमारे युवा पीढ़ी को खोखली करते जा रही है संस्कारहीन, मूल्यहीन, अनैतिक रूपी शिक्षा हमारे भावी पीढ़ी के हाथों में सौंपा जा रहा है जिससे ना समाज का भला हो सकता है और ना ही राष्ट्र उन्नति कर सकता है। भ्रष्ट शिक्षण संस्थानों से पैसों से डिग्री खरीदी और बेची जाने लगी है और इन्हीं डिग्रियों के माध्यम से शिक्षक तैयार हो रहे हैं। शिक्षकों से क्या उम्मीद की जा सकती है कि बच्चों को भविष्य के लिए किस रूप में तैयार कर रहे हैं? संस्कार हीनता, अनैतिकता, भावनारहित, मूल्यहीनता रूपी शिक्षक हमारे युवा पीढ़ी को अनुशासन, नैतिकता, मूल्य परक ज्ञान ...

दे पायेंगे, ऐसी उम्मीद रखना बेकार है। डॉ. सूर्यवाला ने अपनी दूरदृष्टि से वर्तमान के शिक्षा विभागों के इस भयावह समस्याओं को जड़ से समाप्त की आवश्यकता पर बल दिया है।

डॉ. सूर्यवाला अपने इस उपन्यास में भ्रष्ट शिक्षण व्यवस्था के साथ–साथ मानवीय मूल्यों के हो रहे ह्रास पर भी प्रहार किया है उपन्यास के कथानायक विद्या भूषण शर्मा अपने मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए अपने आप को मृत्यु को सौंप देते हैं।

कथानायक विद्याभूषण शर्मा अपनी योग्यता, काबिलियत के साथ, आदर्श मानवीय मूल्यों के साथ कॉलेज में पढ़ाने आते हैं। आधुनिकयुगीन परिवेश में गिरते हुए मानवीय मूल्यों को डॉ. सूर्यवाला ने विद्यालय परिसर के माध्यम से शिक्षक और छात्र के कटुतापूर्ण रिश्तों से विसंगतियों, विद्रुपताओं तथा अपमानित हो रहे शिक्षक के यथार्थ स्थिति से अवगत कराने का सफल प्रयास किया गया है। शिक्षक बच्चों के गुरू होते है, वे ज्ञान देने के साथ–साथ बच्चों को सही मार्ग दर्शन करते हैं उनका भविष्य भी शिक्षकों के हाथों में होती है लेकिन आधुनिकयुगीन बच्चें अपने आप को इतने समझने लगे है कि शिक्षकों की अहमियत क्या होती है?, भूलते जा रहे हैं वे ज्ञान अर्जन के स्थान पर किसी भी गलत तरीके से मात्र पास होकर डिग्री हासिल करना चाहते हैं जिसके लिए शिक्षकों को अपमानित करना, यातना देना ऐसे छात्रों के लिए बड़ी बात नहीं है। उपन्यास में 'रतन बरूआ' ऐसा ही उदण्ड छात्र है जिसके पिता राजनीति मे होते है इसी का फायदा उठाकर कक्षा में पास होते जाता है लेकिन विद्याभूषण ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ, मानवीय मूल्यों से ओत–प्रोत, वे कहाँ ऐसा करनेवाले थे। विद्याभूषण जैसे शिक्षक कोई ईमानदारी का फल ऐसे मिलता है जो 'दीक्षांत' में रतन बरूआ के उदण्डता के माध्यम से स्वार्थ शिक्षक से दिखाई देता है।

''एक कत्थई कार तेज हॉर्न बजाती, अधगीले कीचड़ के छीटें छरछराती गुजर गई थी। कीचड़ के साथ–साथ एक उद्दत मुस्काराहट भरी क्षमायाचना भी उछली थी, 'सॉरी सर'।''[1]

लेंखिका ने एक कॉलेज परिसर के माध्यम से देश में घट रही ऐसी सभी घटनाओं पर बल दिया है कितने ऐसे रतन बरूआ है जो शिक्षकों को परेशान करते, आते–जाते चॉक फेक देते कीचड़ उछाल देते हैं। यहाँ तक कि कक्षा में शिक्षकों पर कॉमेंट कसते, इतने पढ़े–लिखे होने के बावजूद भी शिक्षक अपने–आप में छात्रों के हरकतों से आत्म–ग्लानि महसूस करते हैं–

''और यह भी तो नहीं हो सकता है कि सीधे ऊपर जाकर रूम के सुपरवाइजर से या वाइस प्रिसिपल ऑफिस में शिकायत दर्ज करें कि आज लड़कों ने मुझ पर रंगास्यर का कमेंट मारा था। 'ब्लू जैकाल'की फबती कसी बिल्कुल जैसे अपने हाथों से अपना इज्जत उछालना हो गया।''[2]

डॉ. सूर्यवाला ने ऐसे शिक्षकों, प्राधानाचार्य तथा वाइस प्रिंसिपल जैसे बड़े ओहदे वाले पर भी व्यंग्य किया है कि छात्रों के हुड़दंग को अगर इनके बदौलत रोका जाय को कहीं–ना कहीं छात्रों द्वारा ऐसी बदसलूकी शिक्षकों के प्रति रोका जा सकता है। लेकिन ऐसा नहीं है बल्कि शिक्षकगण भी छात्रों के ऐसी हुड़दंगबाजी मे मजा लेतें है बदमाश बच्चों के प्रति कोई एक्शन नहीं लेते।

लेखिका सूर्यवाला ने जहाँ आधुनिक युगीन शिक्षा के स्तर में मूल्यों के हो रहे ह्रास को दिखाया है वही अपने देश की संस्कार को याद कर, संस्कार के बल पर चरित्र कैसे निखारा जाता था, निःस्वार्थ ने की, सच्चाई नैतिक मूल्यों ने भी अवगत कराने का प्रयास किया है जो कही न कहीं पीछे छुटती जा रही है जिसका परिणाम आज बच्चे अपने माता–पिता की भी इज्जत नहीं करते हैं उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि हम अपनी मानवीय मूल्यों के साथ–साथ अपने संस्कारों के साथ आधुनिक शिक्षा को साथ लेकर चले तो और भी उन्नति के शिखर पर पहुंचेंगे।

''प्राप्त पुस्तकों से अर्जित ज्ञान और संस्कार के बल पर चरित्र को जीवन की सबसे बड़ी पूजा मानने वाले निःस्वार्थी, नेकी, सच्चाई को चरित्र की उज्जवलता की पहली कसौटी फिर विनय और मितव्ययिता।''[3]

आज की शिक्षा व्यवस्था ऐसी होती चली जा रही कि अभी के अधिकांश बच्चों में राष्ट्र के प्रति कोई प्रेम भाव ही नहीं दिखाई देती है कोई राष्ट्रीय पर्व या सांस्कृतिक पर्व के अवसर पर कोई उमंग या खुशी कुछ नही, पहले हमलोग स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य पर महीनों पहले से तैयारी करते जोश के साथ लेकिन आज यह भी मिटती चली जा रही है। इसलिए स्मरण कराया है कि हमें अपने प्राचीन भावों को फिर से सहेजने की आवश्यकता है।

''और कार्य–व्यवहार में पनपती एक ठंडी तटस्था बल्कि अवज्ञा–सी, ज्ञान–विज्ञान, संस्कृति, शिष्टाचार और सबसे बढ़कर सांस्कृतिक राष्ट्रीय पर्व, त्योहारों के प्रति जोश–उमंग के स्थान पर एक निहायत लापरवाही, गैर जिम्मेदाराना दृष्टिकोण।''[4]

आधुनिकता के अंधी दौड़ में हम ऐसे रेस लगा रहे हैं जैसे केवल जीतने से मतलब रह गया है चाहे तरीका गलत हो या किसी अन्य को हानि पहुंचे, ठेस लगे इससे कोई मतलब नहीं रह गया है आज शिक्षा व्यवस्था भी ऐसी होती चली जा रही है कि किताबों को केवल रटाया जाने लगा है परिणाम किसी भी रूप में उत्तीर्ण। लंबे समय तक चलती रहे हो तो हम धीरे–धीरे अपने अस्तित्व को पूरी तरह से खो देंगे।

लेखिका अपने उपन्यास 'दीक्षांत' के माध्यम से घट रही मानवीय मूल्य, नैतिकता जिसका अनुसरण करके हमें सही–गलत को पहचान देती है हमें सफलता मिलती है ये मानवीय मूल्य केवल साहित्य के पन्नों पर रह गये है जिसे हमें पुनः अपने जीवन में लाने की आवश्यकता है।

''कर्तव्य नैतिकता निष्ठा और अनुशासन आदि अब सिर्फ साहित्य और शब्द कोशों के महत्व है।''[5]

शिक्षक शब्द कोष उठाते है और बच्चों को तोता के जैसे रटा देते है जिसमें ना ही संवेदना होती, ना ही संवेदना होती है, ना ही भावना, जो हमारे रूह तक उतर जाये प्राचीन शिक्षक की भांति अगर हम आधुनिकता को अपना रहे है तो प्राचीन धरोहरों में जो आवश्यक है जिस शिक्षा को पाकर बड़े–बड़े विद्वान बने, बड़ी–वड़ी कामयावी मिली, उसे छोडने और बेकार समझने के स्थान पर आवश्यक समझकर शिक्षा में शामिल करना जरूरी है। इस मुद्दे पर सरकार तथा शिक्षक दोनों को गौर करने की आवश्यकता है।

लेखिका ने अपनी तीखी और पैनी दृष्टि से ऐसे समाज का जिक्र किया है, जहाँ केवल पैसे कमाने से मतलब रखते है ऐसे में अगर एकात्मक इंसान ईमानदार और उसूलों के पक्के, आदर्शवादी आ जाये तो अनैतिकता परक लोगों के लगे से निवाला नहीं उतरता, इस भय में जीते रहता है कि कहीं इसके किये गये भ्रष्टाचार और धोखेवाजी में वे लोग खुद ना फस जाये, पूरी के पूरी व्यवस्था ही इस अनैतिक कार्य से सड़ी–गली है जिसमें एक इंसान जहाँ ईमानदारी पूर्वक कार्य करना चाहे वह भला कैसे टिक पायेगा और कौन टिकने देगा?,

''क्यों नहीं हो.....इस तरह के आदर्शवादी उसूल लोगों से हर डिपार्टमेंट हर संस्थान पिंड छुड़ाने की कोशिश करता रहता है।''[6]

लेखिका द्वारा लिखित एक कहानी होगी जय होगी जय ....है पुरूषोत्तम नवीन है जिस भ्रष्ट शासन व्यवस्था की आलोचना की गई है। राजनीति के क्षेत्र में अगर कोई नेता है उसका कोई भी परिवार का सदस्य कुछ भी गलत, गैर कानूनी तरीके से कर सकता है उस पर कोई एक्शन नहीं लिया जा सकता है, इस कहानी का नायक अरूण वर्मा जो कि 'दीक्षांत' के शर्मा सर के जैसे हो आदर्शवादी, ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ पुलिस ऑफिसर है, अरूण वर्मा ने गैर कानूनी रूप से ले जा रहे ट्रक को पकड़ा है जो कि एम.एल.ए. के भतीजे का है जिससे अरूण वर्मा को सस्पेण्ड कर दिया जाता है। वहाँ के सभी कार्यकर्ता अरूण वर्मा के ही ईमानदारी, आदर्श और कर्तव्यनिष्ठ पर साथ देने के बजाय प्रश्न करते हैं–

''आज की जिदंगी से सही और गलत, ईमानदारी और बेईमानी को छोरा–छोर कर अलग–अलग खतियाओं तो कर लोगे क्या? बोलो, इवत है छौटने की? मालूम तो होगा कि बेईमानी, झूठ और फरेब से निकलकर जिदंगी का तजुर्बा करोगे तो क्या होगा''?[7]

लेखिका ने यहाँ एकता पर भी प्रश्न किया है अगर किसी एक मजदूर वर्ग या कोई भी व्यक्ति को भ्रष्ट शासन व्यवस्था के माध्यम से या अन्य तरीके से परेशान किया जाता है तो एकमत होकर खड़े होने की आवश्यकता है, आवाज उठाने की आवश्यकता है, सहयोग करने की आवश्यकता है।

कहानी में यह दिखाने का सफल प्रयास किया गया है कि सत्य, न्याय, सही। गलत सभी सिर्फ कहने और सुनने के लिए रह गया है किसी भी फैसलें पर जाने के लिए प्रूफ की आवश्यकता होती है चाहे वह सही हो या गलत।

''सर, मेरे मानने न मानने से ज्यादा तो महकमा प्रूफ पर जाएगा न! और प्रूफ में पहले ही तीन–तीन जगहों से ट्रांसफर है .....। ये सारी बातें रिनोर्ट के साथ ऊपर जाएंगी।''[8]

लेखिका ने एक और पहलू को लिखा है कि अगर कोई ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ ऑफिसर विभाग में आ जाए तो जल्द से जल्द उसकी तबादला कर दी जाती है ऐसे ही तबादले होते–होते सस्पेंड.... कितनी

यातनामय और दर्दनाक होते हैं।

'होगी जय होगी जय.... है पुरूषोत्तम नवीन! कहानी के अंतिम में पुनः अपनी प्राचीन धरोहर, संस्कृति, संस्कार, नैतिक मूल्यों पर जोर दिया गया है कि थोड़ी बहुत भी अगर ईसानियत बची हुई हैं अगर मानवीय मूल्ये है तो सच्चाई का साथ दिया जा सकता है। जैसा कहानी के अंत में अरूण वर्मा के पिता के साथ हुआ था।

''विभाग का हर छोटा–बड़ा सहयोगी और कर्मचारी जानता था और यह भी कि अठारह सालों की उनकी नौकरी में कहीं लापरवाही या बेअदबी का एक छोटा सा धब्बा भी नहीं था। उनके उसूलों आदर्श और स्वाभिमान की मिसाल पेश की जाती थी। इनकी बेदाग कलम की इज्जत और शोहरत था।''[9]

लेखिका ने यहाँ यह दिखाया है कि किसी काम को ईमानदारी से करने पर नाम और शोहरत अलग ही मिल जाती है जिसे धुंधलाना या मिटाना इतना आसान नहीं होता। इसलिए अरूण वर्मा के पिता को भी जब गलत आरोप में फंसाया गया था तो अंततः सच्चाई का पता लगने के बाद सत्य के समक्ष झुकना ही पड़ा था। परन्तु आज आधुनिक युगीन परिवेश में सत्य–असत्य, धर्म–अधर्म बराबर होते नजर आ रहे है जो कि विनाश की ओर उन्मुख हो रहा है।

लेखिका के दृष्टि के अनुसार अगर हम अपने पौराणिक समय से कुछ–कुछ अच्छाईयों का समावेश अपने जीवन शैली तथा समाज के हित के लिए करें तो हम विश्व में और अधिक विकसित होंगे, जैसे उपन्यास 'दिक्षांत' के अंत में लेखिका ने गुरूदक्षिणा की बात कही है यह शब्द अपने आप में ही मूल्यवान है।

शर्मा सर के पिता के शिष्य जिन्होंने 'गुरूदक्षिणा' के रूप में शर्मा सर के बच्चों के शिक्षा का जिम्मेदारी लेता है।

''यह किसी अहसान, किसी अनुग्रह की दृष्टि से नहीं, सिर्फ अपने संतोष, अपने स्वार्थ के लिए ....., मिडिल तक की परीक्षा उन्हें गॉव से ही देने दीजिये, उसके बाद मै यहाँ शहर में दाखिला दिलवा दूंगा। छात्रवृति और छात्रावास का प्रबंध भी आशा है आप निराश ना करेंगी यह सोचकर कि यह मेरे गुरू के पुत्र के परिवार के लिए मेरी छोटी–सी गुरू दक्षिणा होगी।''[10]

लेखिका की सोचं बड़ी ही उच्च कोटि की है जो सराहनीय है जिसका अनुसरण कर पाठक नई मिशाल कायम कर सकते है, सर्वहित के लिए ....।

निष्कर्ष

लेखिका ने अपने उपन्यास 'दीक्षांत' के माध्यम से पाठकों के बीच मूल्यों में हो रहे ह्रास को दिखाने का प्रयास किया हैं आधुनिक युगीन परिवेश में घट रहे संस्कार–संस्कृति, टुटते–बिखरते मूल्य तथा इससे हो रहे भयावह दुष्परिणाम के साथ–साथ नैतिक मूल्यों का अगर अनुसरण कर चले, अपनी प्राचीन शिक्षा पद्धति के उपयोगी तथा सार्थक पहलुओं के साथ आगे बढ़े तो भी सफलता तथा कामयाबी की अलग ही मिशाल कायम होगी।

संदर्भ सुची

1. सूर्यवाला दीक्षांत, अमन प्रकाशन, कानपुर, तृतीय संस्करण 2017, पृष्ठ– 11
2. वहीं, पृष्ठ–12
3. वहीं, पृष्ठ–21
4. वहीं, पृष्ठ–23
5. वहीं, पृष्ठ–30
6. वहीं, पृष्ठ–86
7. सूर्यवाला लोकप्रिय कहानियाँ होगी जय होगी जय ...हे पुरूषोत्तम नवीन, कहानी प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2015, पृष्ठ–130
8. वहीं, पृष्ठ–131

ix. वहीं, पृष्ठ–136

x. सूर्यवाला दीक्षां, अमन प्रकाशन कानपुर, 2017, पृष्ठ–112